*Published*
*by,*
**R. D. Tripathi,**
SAHITYA SAGAR KARYALAYA,
SUITHA KALAN,
Jaunpur.

First Edition
*1000 Copies.*

*Printed*
*by,*
**Guru Ram Vishwakarma,**
SARASWATI-PRESS,
Benares Cantt.

श्रीहरिः

# जीवन के सूत्र

—•००•—

अद्वेषता—निर्दोष से द्वेष न करना, अद्वेषता के गुण का सूचक नहीं है। द्वेषी से भी जो द्वेष नहीं करता, वही अद्वेषता के गुण की शोभा बढ़ाता है।

अनुयायी—जो धर्म के लिये, देश के लिये, सत्य के लिये, मरने को तैयार न हो, जो अपनी तुच्छता समझकर नम्रतापूर्वक वार्त्तालाप नहीं करता, वह मेरा अनुयायी नहीं है।

अबला—अबला विशेषण आत्मा को लागू नहीं पड़ सकता। इसका प्रयोग तो शरीर के लिये होना चाहिए। जिस स्त्री-जाति ने हनुमान् आदि महावीरों को जन्म दिया है, उस स्त्री को अबला कहना अज्ञान प्रगट करना है।

अमरता—अमरता तो मरने ही में है।

अशान्ति—अशान्ति के बिना शान्ति नहीं मिलती। लेकिन अशान्ति हमारी अपनी हो। हमारे मन का जब खब मन्थन हो

जायगा, जब हम दुःख की अग्नि में खूब तप जायँगे, तभी हम सच्ची शान्ति पा सकेंगे।

अस्पृश्य—यदि किसी को अस्पृश्य कहा जा सकता है, तो केवल उन्हीं को; जो असत्य और पाखण्ड रूपी मैल से भरे हों।

अहिंसा—अहिंसा, शान्ति का अर्थ नामर्दी नहीं है, उसका शुद्ध अर्थ पुरुषत्व—मर्दानगी ही है।

असहयोग—असहयोग की जड़ घृणा नहीं है, बल्कि न्याय और प्रेम है। असहयोग की लड़ाई किसी व्यक्ति विशेष के साथ नहीं ठानी जाती, बल्कि उस व्यक्ति की कार्रवाइयों के साथ। असहयोग शासकों के साथ नहीं जारी किया गया है, बल्कि उस प्रणाली के साथ, जिसके वे संचालक हैं।

अगुआ—अगुआ वह है, जो अधिक सेवा करे।

आत्म-राज्य—दुनिया में बुद्धि का नहीं, किन्तु आत्मा का राज्य होगा। आत्मा का राज्य—अर्थात् सदाचार का राज्य।

आदर्श—आदर्श का पूरा-पूरा आचरण होने से वह आदर्श नहीं रह जाता। आदर्श भूमिति की समकोण कल्पना ही में रहने वाली वस्तु है।

आध्यात्मिक ब्रह्मचर्य—हमने ब्रह्मचर्य की व्याख्या को निरा स्थूल स्वरूप देकर उन लोगों को द्वेषी मानना छोड़ दिया है, जो पल-पल पर क्रोध किया करते हैं। जिस तरह स्थूल ब्रह्मचर्य का पालन सुख के लिये आवश्यक है, उसी तरह आध्यात्मिक ब्रह्मचर्य ( अक्रोध ) की भी आवश्यकता है।

आस्तिकता—आशावाद आस्तिकता है।

ईश्वर के दर्शन—मैं नितान्त ग़रीब भाइयों के साथ अपने को मिलाना चाहता हूँ। इसके बिना मुझे तो ईश्वर के दर्शन और किसी तरह कदापि नहीं हो सकते।

ईश्वर की पहिचान—सारी दुनिया के साथ प्यार करना सीखना ही ईश्वर की पहिचान करना है।

उत्तम प्रचार—उत्तम प्रचार पुस्तकों का प्रचार नहीं है; लेकिन जिस आचार को हम दूसरे से पलवाना उचित समझते हैं, उसका सूक्ष्मतः हम स्वयं पालन करें। यह उत्तम से उत्तम प्रचार है।

ऊँच-नीच—अकेला ईश्वर ऊँचा है, हम सब नीचे हैं। ईश्वर के दरबार में दरजे होंगे, तो वे कर्मानुसार होंगे। अधिक सेवा करनेवाले ऊँचे और कम सेवा करनेवाले नीचे रहेंगे।

एम०ए०—मैं तो उसीको सच्चा एम० ए० कहूँगा, जिसने मनुष्य का डर छोड़कर ईश्वर से डरना सीखा हो।

एक प्रजा बनना—एक प्रजा बनने के मानी तो हैं—तीस करोड़ का एक कुटुम्ब बन जाना। एक भी भारतवासी भूखों मरता है, तो हम सब भूखों मरते हैं—यह समझना और वैसा बर्ताव करना, उसका नाम एक प्रजा बनना है।

ऐक्य—ऐक्य का मतलब एक मत नहीं है। जितने मुँह उतनी बात, जितने सिर उतने विचार होते हुए भी ऐक्य हो सकता है।

ऐकान्तिक सत्य—ऐकान्तिक सत्य तो मौन ही में है।

कर्त्तव्य—कर्त्तव्य तो क्षमा है।

करुणा की मूर्ति—भारत के करोड़ों नरकंकाल करुणा की मूर्त्तियाँ हैं।

कल्पद्रुम—बुद्धिमान् की बुद्धि थोड़ा भी शारीरिक परिश्रम करने से अधिक तेजस्वी बनती है। और यदि वह काम लोकोपयोगी हो, तो वह पुनीत भी होती है। ऐसे शारीरिक कामों में चरखा एक सुन्दर, हलका और मधुर काम होने के कारण उत्तम है। और भारतवर्ष की वर्तमान दशाओं में तो वह कल्पद्रुम के समान है।

कला—तपस्या, जीवन में सबसे बड़ी कला है।

कलाकार—जिसने उत्तम जीना जाना, वही, सच्चा कलाकार है।

कला का भण्डार—मेरे लिए, तो जगतकर्त्ता के रचे हुए नभोमण्डल में कला के अनन्त भण्डार भरे पड़े हैं। उसे देखते हुए मेरी आँखें कभी थकती नहीं। हरबार कुछ-न-कुछ नया ही देखने को मिलता रहता है। ईश्वर की इस श्रेष्ठ कलाकृति के सामने मनुष्यकृत तुच्छ कला किस काम की है।

कला का विकास—जिस अंश तक एक प्रजा दूसरी प्रजा को मारती है, उस अंश तक कला का विकास नहीं होता, बल्कि पाखण्ड का विकास होता है। जिस अंश तक एक प्रजादु:खसहन करती है, मरती है, उसी अंश तक कला का विकासहोता है।

खादी—खादी से मतलब है—हाथकते सूत का हाथ से बुना हुआ कपड़ा।

ख़ूबसूरती—पुराने ज़माने की स्त्रियाँ, गुणों को ही .ख़ूबसूरती मानती थीं। कपड़े पहनकर सुन्दर दिखने का ढौल करना, वेश्या का अभिनय करना है।

खोटा सिक्का—जो सच बोलना नहीं जानता, वह तो खोटा सिक्का है। उसकी क़ीमत ही नहीं।

गो रक्षा—गो रक्षा का अर्थ है—ईश्वर की सम्पूर्ण मूक सृष्टि की रक्षा। गो-रक्षा संसार को हिन्दू धर्म का दिया हुआ प्रसाद है। और तबतक हिन्दू-धर्म बराबर जीवित रहेगा, जबतक हिन्दू गो-रक्षा करने के लिये मौजूद हैं।

गो-रक्षा करने के मार्ग हैं—उसके लिए स्वयं मर मिटना। हिन्दू-धर्म और अहिंसा, यह आज्ञा नहीं देते कि गो-रक्षा के लिए किसी मनुष्य या प्राणी का वध करो। हिन्दुओं को, तो तपस्या, आत्मशुद्धि और स्वार्थ त्याग के द्वारा गो-रक्षा करने का आदेश दिया गया है।

चक्रवर्ती—जो पुरुप पवित्र होकर जगत के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर देता है, वह चक्रवर्ती से भी अधिक सत्ता भोगता है।

चोर—जो बलिदान नहीं करता, उसे मनुष्य नहीं कहा जा सकता। स्वार्थ के लिए जीनेवालों को शास्त्रों ने चोर कहा है।

जितेन्द्रिय—जो आदमी ज़बान से झूठ नहीं बोलता, गन्दा खाना नहीं खाता, बुरा देखता नहीं, जिसकी नज़र साफ़ है, जिस आदमी की निगाह में अपनी स्त्री को छोड़कर और सब

स्त्रियाँ माँ-बहिन के समान हैं, जिसका अपना मन अपनी मुट्ठी में है, वह जितेन्द्रिय है।

ड्योढ़ा असत्य—अर्ध सत्य को मैं ड्योढ़ा असत्य कहता हूँ, वह दोनों को भुलावे में डालता है।

तपश्चर्या—आत्मप्रहार भी एक प्रकार की तपश्चर्या है, तपस्या है।

तलवार—जीभ भी तलवार है, हाथ भी तलवार है और लोहे की धारवाला टुकड़ा भी तलवार है। तलवार पशु बल है।

तलवार का बल—तलवार का बल आत्म-बल के सामने तिनके के समान है! अहिंसा आत्मबल है। तलवार शरीर का बल है। तलवार का उपयोग करके आत्मा शरीरवत् बनती है। अहिंसा का उपयोग करके आत्मा आत्मवत् बनती है।

तलवार-त्याग—तलवारत्याग कहो, दया धर्म कहो, शान्ति कहो, अमन चाहे अहिंसा कहो इन सब का एक ही अर्थ है।

त्रिकालदर्शी—जो सत्य को जानता है; मन से, वचन से, काया से सत्य ही का आचरण करता है, वह परमेश्वर को पहिचानता है। इससे वह त्रिकालदर्शी बनता है।

दया धर्म—भूखों का पेट भरने और नंगों का बदन ढकने के लिए ही अगर हम खायें, पहिने, तो उस में दया धर्म आ ही जाते हैं।

दम्भ—दम्भ नाटक है। नाटक में बहाये हुए आँसुओं से कहीं ज्ञान मिलता है?

दिवाली—राक्षसी राज्य के अंत और राम राज्य की स्थापना की सूचक है।

दिव्यशान्ति—यह दिव्यशान्ति जड़ता, मूढ़ता या दुर्बलता नहीं है। यह तो शुद्ध चेतना-ज्ञान और शूर वीरता है।

धर्म—एक सर्वोपरि अदृष्ट शक्ति के बारे में जीवित अचल श्रद्धा ही मेरे विचार में धर्म है।

ध्येय—ध्येय कपड़ों जैसी चीज न होनी चाहिए। घड़ी में पहनी और घड़ी में उतार डालो। ध्येय उसका नाम है, जिसके लिए जातियाँ, पीढ़ियाँ तक मरती-मिटती रहती हैं।

नैतिक शिक्षा—धर्म का भान होना ही नीति की शिक्षा है।

नैतिक रोग—चोर से बचना जितना जरूरी है, उससे ज्यादा जरूरी चोर को उसके धन्धे से बचाना है।

चोरी या लुटेरापन—यह भी एक प्रकार का नैतिक रोग है।

परीक्षा—विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की परीक्षा उनके ज्ञान से नहीं, वरन धर्माचरण के द्वारा ही होगी।

परमपुरुषार्थ—जो आदमी सत्य, अहिंसादि पाँच यमों में श्रद्धा रखता है और उन्हें यथा शक्ति पालता है; जो आदमी आत्मा है, परमात्मा है, आत्मा अजर और अमर है—यह मानते हुए भी देहाभ्यास से संसार में अनेक योनियों में आता जाता रहता है, वह मोक्ष का अधिकारी है और मोक्ष ही परम पुरुषार्थ है।

पढ़ाई—हमारा मनुष्य बनना प्रथम पढ़ाई है।

पाप—एक भी प्राणी को पीड़ा पहुँचाना, शत्रु मानना, पाप है। जिस काम में आत्मा का पतन हो, वह पाप है।

पापमुक्ति—आत्मशुद्धि का ही दूसरा नाम पापमुक्ति है।

पारस—प्रेम पारस है।

पाठ्यपुस्तक—मैं बालकों के हाथ में पाठ्य पुस्तक देना नहीं चाहता। शिक्षकों को स्वयं उन्हें पढ़ना हो तो भले ही पढ़ें, शिक्षकों के लिए चाहे जितना लिखिये, बालकों के लिए लिखना शिक्षकों को मुर्दा मशीन बना देना है, शिक्षकों में चिन्तनाशक्ति और स्वतंत्रता का नाश कर देना है।

प्रार्थना—ईश्वर से सांसारिक सुख या दूसरी स्वार्थसिद्धि की चीज़ें माँगना प्रार्थना नहीं है। प्रार्थना दुख से व्याकुल आत्मा का गम्भीर नाद है। व्यक्ति या जाति जब किसी महान पीड़ा से व्याकुल हो उठती है, तब, उस पीड़ा का शुद्ध ज्ञान ही प्रार्थना है।

पाठशाला की व्यवस्था—पाठशाला की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि बालक भटकते न फिरें और चरित्रवान् शिक्षकों की देख-रेख में अपना चरित्र निर्माण कर सकें। हिन्दू-बालक-बालिका संस्कृत सीखें और गीता पढ़ें। मुसलमान बच्चे अरबी सीखें, और .कुरान पढ़ें। सब बालक सुन्दर, मज़बूत, कसदार एक-सा सूत कातें और फिर धुनें, तथा बुनें भी।

पातिव्रत—अखण्ड पातिव्रत का तो यही अर्थ हो सकता है कि एक बार ज्ञानपूर्वक जिसे पति माना और जाना हो, उसके

अवसान के बाद भी उसीका स्मरण करके सन्तोष कर लेना। यही नहीं, बल्कि उस स्मरण ही में आनन्द मानना।

प्रजाभावना—जो प्रजा-भावना का विकास चाहते हैं, तो हमारा धर्म है कि हम ग़रीबों को पहली सुविधा दें।

प्रभु का चोर—जो ईश्वर प्रार्थना बिना, सन्ध्या स्नानादि के बिना दिन बिताता है, वह प्रभु का चोर बन जाता है।

पींजरापोल—पींजरापोल कुछ निकम्मे पशुओं को रखने और उन्हें आराम से मरने देने की जगह न होनी चाहिए। मैं पींजरापोल में आदर्श गाय-बैल देखने की आशा करता हूँ। पींजरापोल शहरों के बीच में नहीं बल्कि बड़े खेतों में होने चाहिए। और उस पर बेशुमार धन खर्च के बदले उसमें से बेशुमार धन पैदा होना चाहिए।

पुरुषार्थ—हममें आत्मा के सो जाने की कर्त्तव्य विमुखता की आदत पड़ गई है, उसे समय समय पर जगाना पड़ता है, और यही पुरुषार्थ है।

प्रेम—जड़ पदार्थों में एक दूसरे से मिलकर रहने में जो शक्ति है, वही शक्ति चेतन पदार्थ में यानी हम में भी होनी चाहिए। आकर्षण शक्ति का नाम प्रेम है।

पैसा—मजदूरी ही सच्चा पैसा है।

पंचयज्ञ—गृहस्थ के लिए भारत में पाँच यज्ञ आवश्यक हैं चूल्हा, चक्की, मूसल, दोघड़ और चरखा।

मुक्ति—मुक्ति का अर्थ है—जन्म से, अतएव मृत्यु से भी, छुटकारा पाना।

व्यवहारधर्म—जब किसी नियम का व्यवहार, देश और काल की मर्यादा से बाँध दिया जाय, तब उसे व्यवहारनियम या व्यवहारधर्म कहते हैं।

शास्त्र—जो हमें मोक्ष की ओर ले जाता है वह शास्त्र है।

शान्ति—बलिष्ठ का शस्त्र है। और उसी के हाथ में शोभा देता है। शान्ति का अर्थ क्षमा है और क्षमा, वीर का भूषण है।

शान्ति-योग—शान्तियोग का भाव नम्रता धारण करना है। शान्तियोग का अर्थ ईश्वर का भरोसा है।

शिष्टाचार—खान, पान, या विवाह व्यवहार, हर कहीं न करने को मैं शिष्टाचार मानता हूँ। इस में आरोग्य और पवित्रता की रक्षा है

शुद्धता—शुद्धता के भिन्न-भिन्न नाप नहीं होते, जबतक उसमें जरा,भी अशुद्धि होती है, तब तक वह शुद्धता नहीं मानी जा सकती।

शुद्ध पुरुषार्थ—मौत आज आवे या कल। उसका भय रक्खे बिना हम अपने धर्म का पालन करें, यह शुद्ध पुरुषार्थ है।

शुद्ध यज्ञ—मृत्यु भय को छोड़ने के लिये हम मथ रहे हैं—यह तो शुद्ध यज्ञ है।

शुद्ध सत्य—परिमित सत्य के सिवा एक शुद्ध सत्य है, जो अखण्ड है, सर्वव्यापक है, लेकिन यह अवर्णनीय है क्योंकि सत्य ही परमेश्वर है।

शुद्ध क्षत्रिय—जब मैं अपनी, अपनी स्त्री और अपने देश की रक्षा में सिर कटा दूँ तब मैं शुद्ध क्षत्रिय हूँ।

शूरवीर सिपाही—विना हथियार जो दुश्मन के सामने खुली छाती रखकर मरने की हिम्मत कर सकता है, वह शूरवीर सिपाही है।

सपूत—बाप के जीते जी, जो पुत्र बाप के अच्छे गुणों को कम भी लेता हो, पर बाप के मरने पर पूरे-पूरे ले ले, वह सपूत है। वह नहीं, जो रोना-पीटना करे अथवा बड़े-बड़े जातिभोज देने में लग जाय।

सत्य—सत्य शब्द सत् से बना है। सत् का अर्थ—होना है। तीनों काल में एक ही रूप में एकमात्र परमात्मा ही का अस्तित्व है।

सत्याग्रह—जो सत्य हो, वह करना, उसीका नाम सत्याग्रह है। उसकी सीमा कुछ सरकार और प्रजाके बीच के सम्बन्ध ही में समाप्त नहीं होती। दुनियादारों के लिए भी यही एक अनमोल शस्त्र है।

सभ्यता—कोई एकान्तिक शब्द नहीं है। हर जगह उसका एक ही अर्थ नहीं होता। पश्चिम की जो सभ्यता है, वह पूर्व की असभ्यता हो सकती है।

सम्राट—जिसमें सत्य और सेवा पूर्णरीति से प्रगट होते हैं, वह अवश्य ही जगत के हृदय पर सम्राट के समान शासन कर सकता है। और निश्चय किये हुए कार्य को पूरा करता है।

स्वतंत्रता—स्वतंत्रता की सच्ची कसौटी यही है कि जबतक कोई व्यक्ति किसी की जान-मालपर किसी तरह का अनुचित आक्षेप नहीं करता, उसे अपनी इच्छा के अनुसार काम करने की पूर्ण स्वाधीनता होनी चाहिए।

स्वराज्य—स्वराज्य का अर्थ है—स्वयं अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य।

स्वदेशाभिमान—परदेश को नुक़सान पहुँचाकर मैं भारत के हित करने का अपराध नहीं करूँगा—यह भावना ही मेरी दृष्टि में सच्चा स्वाभिमान है। यह मेरा स्वदेशाभिमान जितना विशाल है, उतना ही संकुचित भी है। सारी दुनियाँ के कल्याण के फेर में पड़ने से मुझे मजा ही नहीं आता। मुझे तो अपने देश के कल्याण में मजा आता है।

साम्राज्य—साम्राज्य शान्ति में पशुबल साम, दाम, दण्ड भेद आदि शक्तियों का प्रयोग होता है। इसमें नीति का कोई नाप नहीं है। उत्तमता का नाम या कसौटी तो नीति ही है, और नीति पर टिका हुआ साम्राज्य ही पक्का साम्राज्य है।

सिपाहीपन—सिपाहीपन मरने में है, मारने में नहीं। किसी की आबरू बचाने में है, आबरू लूटने में नहीं।

सुधार—सच्चा सुधार, तो वह है कि स्त्री की भाँति पुरुष भी गृहस्ती के टूट जाने पर फिर से विवाह न करे।

सूक्ष्मवीर्य—शान्ति भी एक सूक्ष्मवीर्य है। उसका संचय करनेवाला प्रौढ़ ब्रह्मचारी बनता है और तेजस्वी होता है।

संयम—पश्चिम का संयम आवश्यकता, पालिसी पर रचा हुआ है, पूर्व का संयम ध्येय के समान है।

संतोष—संतोष तो प्रयत्न में है, अभीष्टसिद्धि में नहीं।

संस्कृत जनता—भारत के समान संस्कृत प्रजा मुझे दुनिया के परदे पर दूसरी नहीं दीख पड़ती।

स्त्रीशिक्षा—स्त्री अर्द्धाङ्गिनी है, यह शिक्षा कौन दे सकता है। कुछ स्त्रियों के विद्यापीठ की ग्रेजुएट बन जाने से ही क्या होता है। उसे शिक्षा नहीं कह सकते। स्त्री अर्द्धांगिनी है—यह अच्छी तरह समझ में आ जाय, बस, इसी में सच्ची शिक्षा है।

हिन्दुओं की पहिचान—हिन्दुओं की पहिचान न, तो उनके तिलकों से होगी, न उनके मंत्रों के युद्ध-घोष से, न उनके तीर्थाटन से और न जाति बन्धन के नियमों के अत्यन्त शिष्टाचार युक्त पालन से ही होगी; बल्कि उनकी पहिचान, तो उनके गोरक्षा के सामर्थ्य से होगी।

हिन्दू-धर्म—हिन्दू-धर्म संकुचित धर्म नहीं है। उसमें संसार के समस्त पैगम्बरों की पूजा के लिए गुंजायश है। यह कोई मिशनरी—किसी धर्म मत का प्रचार करनेवाला धर्म नहीं हिन्दू धर्म तो हर एक मनुष्य से यह कहता है, कि तुम अपने विश्वास या 'धर्म' के अनुसार ईश्वर का भजन पूजन करो। और इस प्रकार वह दूसरे समस्त धर्मों के साथ मेल-जोल से रहता है।